तृतीय नेपोलियन की वैदेशिक नीति

Course – M.A. History, Part – II, Paper – XVI, Prepared by – Dr. P.K. Poddar

नेपोलियन तृतीय एक साम्राज्य

विदेश नीति अपनाकर फ्रांस का यश फैलाना चाहता था। वह भलीभाँति जानता था कि नेपोलियन नाम से जिन राष्ट्रीय गौरव सम्बन्धी भावनाओं को उसने जाग्रत किया था, वे यदि संतुष्ट नहीं हुई और वह यूरोपीय राजनीति में फ्रांस को पुनः प्रतिष्ठित पद पर आसीन न कर सका, तो जनता उसके समस्त भौतिक उपकारों को भूलकर उससे असंतुष्ट हो जायेगी और उसका साम्राज्य स्थिर न रह सकेगा। वह स्वयं राष्ट्रीयतावादी था और समझता था कि बाह्य राष्ट्रीयता की सहायता करने से फ्रांस की प्रतिष्ठा में वृद्धि होगी। नेपोलियन के मनसूबों ने उसे कई अन्तर्राष्ट्रीय झगड़ों में फँसा दिया, जिससे अंत में उसका पतन हो गया।

राष्ट्रपति पद पर आसीन होने के बाद शीघ्र ही उसने मेजिनी के रोमन गणतंत्र को पलट कर पोप को पुनः सिंहासन पर बिठलाया था (1849) जिससे उसे कई प्रकार से लाभ पहुँचा था। फ्रांस की कैथोलिक जनता तथा शक्तिशाली पादरी वर्ग को इस कार्य से बड़ा संतोष हुआ, सेना को विजय गर्व की अनुभूति का अवसर मिला और जनमत यह देख कर बड़ा प्रसन्न हुआ कि फ्रांस यूरोपीय राजनीति में अपना उचित स्थान लेने के लिए आगे बढ़ रहा है।

फ्रांसीसी पादरियों को अपना कट्टर समर्थक बनाने, संसार में फ्रांस का यश फैलाने तथा पूर्व में रूस के प्रभाव कम करने के उद्देश्य से नेपोलियन ने एक ऐसी स्थिति का सृजन कर दिया जिसके कारण 1854 में क्रीमिया

युद्ध शुरु हो गया। वह चाहता था कि युद्ध में रूस को पराजित कर मास्को के अपमान का बदला लिया जाय। क्रीमिया युद्ध में रूस की पराजय हुई और वह बड़ा अपमानित हुआ। रूस की पराजय से नेपोलियन तृतीय की लोकप्रियता फ्रांस में काफी बढ़ गयी और उसकी महत्त्वाकांक्षा आकाश छूने लगी। इसी कारण वह बाद के वर्षों में अन्य अन्तर्राष्ट्रीय उलझनों में फँसा। अब फ्रांस का गौरव यूरोप में फिर से स्थापित हो गया। युद्ध के बाद पेरिस में हुए शान्ति-सम्मेलन का अध्यक्ष नेपोलियन तृतीय बना, जिससे अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्र में पेरिस की महत्ता फिर से मान ली गयी। पेरिस यूरोपीय राजनीति का केन्द्र बन गया और नेपोलियन का प्रभाव काफी बढ़ गया। देश की आन्तरिक राजनीति में उसकी स्थिति अत्यन्त सुदृढ़ हो गयी।

मालडेविया और वैलेशिया में जब राष्ट्रीय आन्दोलन शुरु हुआ तब यूरोपीय राज्यों के विरोध के बावजूद नेपोलियन वहाँ के देशभक्तों का समर्थन करता रहा। अंत में 1859 में दोनों उपराज्य मिलकर एक हो गए और उनका नाम रूमानिया पड़ा। इस प्रकार नेपोलियन की सहायता से यूरोप में एक नए राष्ट्र का निर्माण हुआ जिससे फ्रांस की अन्तर्राष्ट्रीय प्रतिष्ठा भी बढ़ी।

क्रीमिया की सफलता के बाद नेपोलियन की महत्वाकांक्षा को अधिक बल मिला। रूस को पराजित करने के बाद वह अब अपने चाचा के दूसरे महान् शत्रु आस्ट्रिया को नीचा दिखाना चाहता था। इटली में आस्ट्रिया के स्वार्थ थे। इस समय इटली एकीकरण के लिए इटालीवासी प्रयास कर रहे थे। नेपोलियन की सहायता की आशा में ही

कावूर ने एक सेना क्रीमिया के युद्ध में फ्रांस की तरफ से रूस से लड़ने के लिए भेजा था। आस्ट्रिया ही इटली के एकीकरण में बाधक था। अतः उसने कावूर से 1858 ई० में प्लाम्बियर्स की संधि की जिसके अनुसार नेपोलियन ने नीस और सेवाय के बदले सार्डिनिया-पिडमोण्ट को आस्ट्रिया के विरुद्ध सैनिक सहायता देने के लिए वचन दिया। जिस समय युद्ध में आस्ट्रिया पराजित हो रहा था, उसी समय एकाएक फ्रांस ने युद्ध से अलग हो जाने की घोषणा करते हुए आस्ट्रिया के साथ संधि कर ली। नेपोलियन के इस विश्वासघाती कार्य से कावूर और इटली के देशभक्तों को बड़ी निराशा हुई। यद्यपि संधि के अनुसार नेपोलियन को नीस और सेवाय प्राप्त हुए परन्तु इटली के राजनीतिज्ञों के बीच वह धोखेबाज बन गया। नेपोलियन अपनी इटली सम्बन्धी नीति से किसी को भी संतुष्ट नहीं कर सका और अब यूरोप के सभी राज्य भी चौकन्ने हो गए। यहीं से उसके साम्राज्य का पतन आरंभ हो गया और 1860 के बाद नेपोलियन को वैदेशिक क्षेत्र में कोई सफलता नहीं मिली।

1863 में पोलैंड ने रूस के शासन के विरुद्ध विद्रोह कर दिया। पोलैंड की जनता को उम्मीद थी कि अपने को दलित राष्ट्रों का समर्थक कहने वाला नेपोलियन उनकी मदद करेगा। नेपोलियन सिर्फ मौखिक सहानुभूति प्रकट करने के अलावे कुछ नहीं किया। रूस ने पोलैंड से विद्रोह को कुचल डाला। नेपोलियन की पोलैंड सम्बन्धी नीति से साम्राज्य की प्रतिष्ठा को घोर आघात पहुंचा।

यूरोप में अपनी प्रतिष्ठा को नष्ट होते देख नेपोलियन ने यूरोप के बाहर गौरव प्राप्त करने की चेष्टा की। 1857 में नेपोलियन ने एक सेना भेजकर सम्पूर्ण अल्जीरिया को अपने साम्राज्य में शामिल कर लिया। 1856 में उसने चीन के विरुद्ध इंगलैंड के साथ सहयोग किया, चीन के साथ युद्ध लड़ा और उसे पराजित कर चीन में अनेक सुविधाएँ प्राप्त की। 1859 में हिन्द-चीन पर भी फ्रांसीसी आधिपत्य कायम हुआ। अफ्रीका के कई भू-भागों पर भी उसने उपनिवेश बनाने का यत्न किया। 1863 में कम्बोडिया को फ्रेंच संरक्षण में लेकर पूर्वी एशिया में फ्रेंच साम्राज्य की स्थापना की।

फ्रांस में शासन के विरुद्ध बढ़ते हुए विरोध और असंतोष तथा यूरोप में ~~अपनी~~ अपनी गिरती हुई प्रतिष्ठा की रक्षा के लिए नेपोलियन ने मैक्सिको में एक साम्राज्य स्थापित करने की योजना बनाई। मैक्सिको, जो 1823 ई० में स्पेनी दासता से मुक्त हुआ था, इंगलैंड, स्पेन और फ्रांस सरकार से काफी ऋण लिया था। 1861 ई० में जब बेनितो ज्वारेज मैक्सिको का राष्ट्रपति बना तब उसने कर्ज लौटाने से इनकार कर दिया। इससे इंगलैंड, फ्रांस और स्पेन ने मैक्सिको पर आक्रमण कर दिया। ज्वारेज बाध्य होकर कर्ज लौटाने के लिए राजी हो गया। परिणामतः स्पेन और इंगलैंड की सेना लौट गई। लेकिन नेपोलियन अपनी प्रतिष्ठा बढ़ाने के चक्कर में वहाँ राजतंत्र कायम करना चाहता था और उसने अकेले ही अपने सैन्यबल से आस्ट्रिया के सम्राट के छोटे

भाई मैक्सिमिलियन को मैक्सिको की गद्दी पर बैठाया। मैक्सिमिलियन कैथोलिक था। इस कारण नेपोलियन आशा करता था कि उसकी कैथोलिक प्रजा उसके इस कार्य से प्रसन्न होगी, लेकिन शीघ्र ही मैक्सिमिलियन के विरुद्ध मैक्सिको में विद्रोह हो गया। इसी बीच अमेरिका में गृहयुद्ध समाप्त हो गया और अमेरिका ने फ्रांस को धमकी भरी चेतावनी दी कि वह "मुनरो सिद्धान्त" के अनुसार अमेरिका के मामले में हस्तक्षेप नहीं करे। नेपोलियन अमेरिका से युद्ध लड़ने की स्थिति में नहीं था, अतः उसने अपनी सेना मैक्सिको से वापस बुला ली। क्रान्तिकारियों ने मैक्सिमिलियन की हत्या 19 जून, 1867 को कर दी। इस घटना से नेपोलियन की साख गिरी। उसकी हर जगह बदनामी हुई और आस्ट्रिया का सम्राट भी उसका शत्रु हो गया। सम्पूर्ण मैक्सिको काण्ड नेपोलियन की महान असफलता थी। फ्रांस के गौरव को काफी हानि पहुँची। कहा गया है कि "मैक्सिको का युद्ध नेपोलियन तृतीय के लिए वैसा ही घातक सिद्ध हुआ जैसा कि स्पेन का प्रायद्वीपीय युद्ध नेपोलियन प्रथम के लिए।"

नेपोलियन तृतीय जर्मनी के चांसलर बिस्मार्क की कूटनीति के सामने नहीं टिक सका और अंततः उसकी पराजय प्रशा से 1870 ई० में सेडान की लड़ाई में हुई। वास्तव में बिस्मार्क ने फ्रांस की तटस्थता के लिए कुछ क्षेत्र देने का लालच देकर आस्ट्रिया को 1866 ई० में पराजित कर दिया। नेपोलियन

को आशा नहीं थी कि आस्ट्रिया-प्रशा से पराजित होगा। लेकिन जब युद्ध में आस्ट्रिया की पूर्ण पराजय हो गयी और प्रशा के नेतृत्व में उत्तरी जर्मन राज्य संघ बन गया तब नेपोलियन के पाँव तले की धरती खिसकने लगी। उसने अब अपनी गलती महसूस की। अपनी बेवकूफी से उसने अपने निकट पड़ोस में एक सशक्त राष्ट्र को उभरने का मौका दिया था। यह उसकी विदेश नीति की बहुत बड़ी पराजय थी। आस्ट्रिया-प्रशा युद्ध के परिणामस्वरूप नेपोलियन की आन्तरिक और बाह्य स्थिति डाँवाडोल हो गयी। फ्रांस के अंदर उसके विरुद्ध असंतोष और विरोध निरंतर बढ़ने लगा। इस स्थिति में नेपोलियन ने निश्चय किया कि अब किसी भी कीमत पर दक्षिणी जर्मनी के शेष चार राज्यों को जर्मन राज्य संघ में नहीं मिलने दिया जायेगा। उधर बिस्मार्क जर्मनी की एकता पूरी करने पर डटा हुआ था। ऐसी हालत में दोनों के सम्बन्ध बिगड़ते गये और युद्ध का होना अनिवार्य हो गया। दूसरी तरफ बेल्जियम के प्रश्न पर इंगलैंड फ्रांस के विरुद्ध हो गया। आस्ट्रिया और रूस भी फ्रांस के पक्ष में नहीं थे। अतः स्थिति से लाभ उठाकर स्पेन की गद्दी के मसले पर बिस्मार्क ने नेपोलियन को युद्ध करने के लिए बाध्य किया। इस प्रकार 1870 में फ्रांस और प्रशा के बीच युद्ध छिड़ गया। फ्रांस को किसी यूरोपीय राज्य से सहायता नहीं मिली। सेडान के युद्ध में नेपोलियन पराजित हुआ और उसे साम्राज्य खोकर बंदी बनना पड़ा। इस प्रकार नेपोलियन तृतीय और उसके साम्राज्य का अंत हुआ और फ्रांस में 1871 ई० में पुनः गणतंत्र की स्थापना हो गई।

इस प्रकार हम देखते हैं कि नेपोलियन तृतीय की विदेश नीति पूर्णतः असफल रही। उसकी विदेशनीति विरोधाभासों से पूर्ण थी। कुछ समय तक नेपोलियन सफल रहा और फ्रांस यूरोपीय राजनीति का केन्द्र बन गया। किन्तु 1867 के बाद वह लगातार असफल होता रहा। उसने इंगलैंड की मित्रता खो दी और आस्ट्रिया तथा रूस को शत्रु बना लिया। उसने प्रशा को शक्तिशाली होने का मौका दिया। असल में वह बिना दूरगामी परिणाम सोचे हुए अपने को अपने देश में लोकप्रिय बनाने के लिए फ्रांस को युद्धों में झोंकता गया, जिसका परिणाम धन-जन का अपव्यय तो था ही, इसके साथ ही उसको अंतर्राष्ट्रीय क्षेत्र में भी कुख्याति हासिल हुई।